कहानी

सदानंद की नन्हीं दुनिया

चित्र: विप्लव शशि

सत्यजीत रे

बच्चों की दुनिया निराली है। वहां खुश दिखने के लिए हंसना, मज़ाक करना ही एक मात्र विकल्प नहीं है उनके पास। अपनी इस दुनिया में वो अपने लिए कभी खुशियां खोज निकालते हैं तो कभी गम भी।

सदानंद भी यही मानता था कि गधों की तरह हंसते रहना ही खुश दिखने का एक मात्र तरीका नहीं है। सदानंद को चींटियों

को निहारने में बेहद मज़ा आता था।

अपनी बीमारी के दौरान उसकी चींटियों से अच्छी-खासी दोस्ती हो गई। सदानंद की दोस्त चींटियां न सिर्फ उससे बतियाती थीं, बल्कि अपनी कुश्तियों से उसका मन भी बहलाती थीं।

इसी दौर में सदानंद ने बिस्तर पकड़ लिया और उसे अस्पताल में भर्ती करवाना पड़ा। वहां डॉक्टर ने उसके दो दोस्तों लाल बहादुर और लालचंद के साथ बदसलुकी की..... फिर आगे क्या हुआ? पढ़िए बच्चों की दुनिया से रुबरु करवाती इस कहानी में।

आज मैं काफी प्रफुल्लित हूं। इसलिए यह अच्छा समय है आपको सब कुछ बताने का। मैं जानता हूं आप मुझ पर विश्वास करेंगे। आप हमारे यहां के लोगों जैसे नहीं हैं। वे तो मुझ पर सिर्फ हंसना जानते हैं। वे समझते हैं मैं यह सब खुद गढ़ता हूं। इसलिए मैंने उनसे बात करना ही छोड़ दिया है।

दोपहर का समय है इसलिए मेरे कमरे में कोई और नहीं है। वे दोपहर बाद ही आएंगे। अभी यहां केवल दो जने हैं – मैं और मेरा दोस्त लाल बहादुर। लाल बहादुर सिंह! ओह, कल मैं उसे लेकर कितना चिंतित था। मुझे लगता था अब वो कभी भी मेरे पास वापस न आएगा। लेकिन वो काफी होशियार है इसलिए साफ बच निकला। कोई और होता तो कब का निपट चुका होता।

अरे, मैं भी कितना पागल हूं। मैंने आपको अपने दोस्त का नाम तो बता दिया लेकिन मेरा अपना नाम नहीं बताया। मैं हूं सदानंद चक्रवर्ती। किसी दाढ़ीवाले बूढ़े आदमी की सी छवि उभरती है। है ना! जबकि अभी तो मैंने मात्र 13 बसंत देखे हैं। वैसे इसमें मैं कर भी क्या सकता हूं अगर मेरा नाम इतने पुराने फैशन का है। आखिर ये नाम मैंने तो चुना नहीं था। यह तो मेरी दादी की करामात है।

अगरचे उन्हें पता होता कि यह नाम मेरे लिए कितनी मुसीबतें खड़ी करने वाला है तो यकीनन वो मुझे किसी और नाम से पुकारती। उन्हें पता भी कैसे चलता कि लोग मुझे कह-कहकर सताएंगे कि "तुम इतने उदास क्यों दिखते हो, जब तुम्हारा नाम 'खुशमिजाज़' है?" बेवकूफ लोग! समझते हैं गधे की तरह हंसते रहना ही खुश दिखने का एकमात्र तरीका है। वे जानते नहीं कि ढेरों तरह से खुश

चित्र : पुलक विश्वास

रहा जा सकता है। उन सबके लिए मुस्कुराना तक ज़रूरी नहीं होता। अब मान लो, ज़मीन से फूटी एक छोटी-सी टहनी है जिसकी नोक पर एक टिड्डा बार-बार उड़कर बैठ रहा है। यकीनन इसे देखना आपको खुशी देगा, लेकिन अगर आप मुंह फाड़-फाड़कर हंसने लगें तो सब समझेंगे कि आप कुछ सरक गए हैं। मेरे खिसके हुए अंकल की तरह। मैंने उन्हें कभी देखा तो नहीं लेकिन सुना ज़रूर है कि वे हमेशा हंसते रहते थे। यहां तक कि जब उन्हें चेन से बांधना पड़ा तो उन्हें यह सब कुछ इतना अजीब लगा कि उनके तो हंसते-हंसते पेट में बल ही पड़ गए।

तो जनाब सच यह है कि मैं उन चीज़ों में लुत्फ ढूंढ लेता हूं जहां बाज़ लोगों की निगाह तक नहीं ठहरती। यहां तक कि मैं बिस्तर पर लेटे-लेटे भी ऐसी चीज़ों को ढूंढ लेता हूं जो मुझे खुशी देती हैं। कभी-कभी एक बिनौला खिड़की से होता हुआ कमरे में उड़ आता है। छोटी-छोटी चीज़ें जिन्हें हवा की नाज़ुक सांसें तक इधर-उधर बिखरा जाती हैं। कितना खुशनुमा नज़ारा होता है यह। वो उड़ते हुए आप तक आए और आप फूंक पर बैठा उन्हें वापस ऊपर हवा में पहुंचा आएं और अगर कोई कौआ आपकी खिड़की पर जम जाए तो समझो सर्कस का मसखरा ही वहां आ बैठा है। जब भी कोई कौआ मेरे बगल में आ बैठता है तो मैं एकदम जड़ हो जाता हूं – सावधान – और कनखियों से उसके मसखरेपन के मज़े लेता हूं।

लेकिन अगर आप मुझसे पूछें कि किस चीज़ में मुझे सबसे ज़्यादा मज़ा आता है तो मेरा जवाब होगा, चींटियों को निहारने में। यह सही है कि इसमें सिर्फ मज़ा ही नहीं है बल्कि और भी .... नहीं, नहीं – इस वक्त सब कुछ बताकर मुझे आपका मज़ा किरकिरा नहीं करना। बेहतर होगा कि मैं शुरू से शुरू करूं ...।

तकरीबन साल भर पहले की बात है। मैं बुखार से तप रहा था और यह कोई नई बात न थी। मुझे ठण्ड कुछ जल्दी ही लग जाती और फिर बुखार आ धमकता। मां का मानना है कि यह अधिकांश समय घर से बाहर घास पर बैठे रहने का नतीजा है। हमेशा की तरह, बिस्तर पर पड़ने के पहले एक-दो दिन तो मज़े से बीते। सर्दी और खुमारी का मिला-जुला उम्दा अहसास। इसमें स्कूल न जाने की अतिरिक्त खुशी का छौंक भी था। मैं बिस्तर पर लेटा खिड़की के बाहर अकाव की झाड़ी पर एक गिलहरी का चढ़ना देख रहा था। तब मां ने मुझे एक कड़वा सिरप पीने को दिया। मैंने अच्छे बच्चे की तरह उसे पिया और फिर गिलास में पानी भरा। कुछ पिया कुछ खिड़की से बाहर की तरफ उछाल दिया।

कम्बल को अपने चारों ओर लपेट कर मैं आंखें बंद करने ही वाला था कि मैंने कुछ अजीब-सा नज़ारा देखा। पानी की कुछ बूंदें खिड़की की चौखट पर गिर पड़ी थीं और इन बूंदों में से एक बूंद में एक काली चींटी डूबने से बचने की भरसक कोशिश में लगी थी। गौर से देखने पर मुझे अचानक लगा जैसे चींटी अब चींटी न रही हो, इंसान बन गई हो। दरअसल मुझे जोंटू के जीजे की याद हो आई जो मछली पकड़ते वक्त तालाब में फिसल गया था। तैरना नहीं जानते थे सो डूबने से बचने के लिए बेतरतीब ढंग से तेज़-तेज़ हाथ पैर मार रहे थे। अंततः जोंटू के बड़े भाई और उनके नौकर नरहरी ने मिलकर उन्हें बचा लिया था।

उस घटना के याद आते ही मुझमें चींटी को बचाने की उत्कट इच्छा हो आई। बुखार की परवाह न कर मैं बिस्तर से कूदा और कमरे से बाहर पिता की स्टडी की तरफ दौड़ पड़ा। वहां उनके कागज़ों में से सोख्ते कागज़ का एक टुकड़ा फाड़ा और वापस कमरे में भागा चला आया। बिस्तर पर कूदकर मैंने झट से उस सोख्ते कागज़ का एक सिरा पानी की बूंद से छुआ दिया। देखते ही देखते कागज़ ने सारा पानी पी लिया।

अचानक आई इस रहमत ने एक पल के लिए चींटी को बौरा दिया। वो कुछ देर इधर-उधर होती रही। फिर चौखट से दूर पानी के पाईप के पास कहीं गायब हो गई। उस दिन, फिर चौखट पर और कोई चींटी न आई। दूसरे दिन बुखार बहुत तेज़ हो गया। दोपहर के करीब मां आई। 'खिड़की की तरफ क्यों ताक रहे हो? आंखें बंद कर सोने की कोशिश करो।' मां को खुश करने के लिए मैंने आंखें मूंद लीं। लेकिन जैसे ही वो गई मैं पाईप की ओर फिर से ताकने लगा।

दोपहर के वक्त जब सूरज अकाव के पेड़ के पीछे था, मैंने पाइप के मुख

से झांकते हुए एक चींटी को देखा। अचानक वो फुर्ती से बाहर आई और खिड़की की चौखट पर जल्दी-जल्दी घूमने लगी। हालांकि सभी काली चींटियां एक सरीखी दिखती हैं, जाने क्यों मुझे महसूस हुआ यह वही कल वाली चींटी है जो डूबने के कगार पर थी। मेरे कल के दोस्ताना व्यवहार के कारण आज वो मुझसे मिलने आई है। मैं पहले ही से तैयार था। अपने तकिए के नीचे मैंने चीनी की एक पुड़िया रख छोड़ी थी। मैंने उसे खोला और चीनी का एक बड़ा-सा दाना चौखट पर रख दिया। चींटी कुछ चौकन्नी-सी होती दिखी। कुछ पल ठहरी। फिर धीरे-धीरे सावधानी से चीनी की ओर बढ़ने लगी। और फिर सब तरफ से उसे अपने सिर से धकियाने लगी। अचानक उसने नाली की ओर रुख किया और गायब हो गई।

मैं सोच में पड़ गया – अजब मामला है! मैंने उसे उतना बड़ा चीनी का दाना दिया और वो उसे छोड़कर चल दी। अगर खाना नहीं चाहिए था तो फिर वो यहां आई ही क्यों?

कुछ देर में डॉक्टर साहब अवतरित हुए। नाड़ी देखी, जुबान देखी, स्टेथोस्कोप को मेरी छाती व पीठ से लगाया तथा कुछ और कड़वे घोल दे गए। उनका कहना था कि बुखार अब दो दिन का ही मेहमान था। इस खबर ने मुझे ज़रा भी खुशी न दी। बुखार नहीं यानी स्कूल हां और स्कूल हां, यानी चींटियां नहीं (देख पाना)। खैर, डॉक्टर के जाते ही मैं खिड़की की ओर मुड़ा और मेरी खुशी का ठिकाना न रहा। नाली से काली चींटियों का पूरा का पूरा हुजूम चौखट की ओर मार्च कर रहा था। ज़ाहिर है उसकी अगुआ तो वही चींटी होगी। उसी ने इन्हें चीनी के बारे में बताया होगा। उन्हें इस तरह काम करता देख मैं इन चींटियों के कौशल को खुद देख पाया। उन सबने एक-दूसरे को पकड़ एक चेन-सी बनाई और उस दाने को पाईप की तरफ धक्का देने लगीं। मैं बता नहीं सकता वो सब कितना अजीब और मज़ेदार था। मैं कल्पना करने लगा। अगर वे कुली होतीं वो इतना भारी वज़न उठाते वक्त ज़रूर चिल्ला रही होतीं – दम लगाके हैशा, ज़ोर लगाके हैशा....।

बुखार के बाद का स्कूल कुछ दिनों तक बहुत बोर था। मुझे बार-बार खिड़की की चौखट का ख्याल आता। वहां हर दोपहर चींटियां आती होंगी। हर सुबह स्कूल जाने से पहले मैं वहां थोड़ी-सी चीनी रख जाता और लौटने पर उसे नदारद पाता। पहली कक्षा में मेरी सीट क्लास के बीचोंबीच थी। मेरे पास शीतल बैठता था। एक दिन मुझे थोड़ी देर हो गई। क्लास में पहुंचा तो मेरी सीट पर फणि को बैठा पाया। कोई विकल्प न था सो आखिरी सीट

पर दीवार के पास जा बैठा।

खाने की छुट्टी से ठीक पहले का पीरियड इतिहास का होता। अपनी पतली पैनी-सी आवाज़ में इतिहास के अध्यापक हराधन बाबू हनिबल की बहादुरी के किस्से बता रहे थे। हनिबल ने इटली पर चढ़ाई के लिए कार्थे से फौज की अगुवाई की और आल्प्स पर्वत पार किया। यह सुनते ही अचानक मुझे अहसास हुआ ज्यों हनिबल की फौज क्लास में है और मेरे काफी करीब से मार्च कर रही है।

मैंने अपने आसपास देखा और आंखें पीछे की दीवार पर कुछ खोजने लगीं। दीवार के नीचे छोटी काली चींटियों की लंबी कतार चली जा रही थी। वैसे ही जैसे कोई शौर्यपूर्ण सेना रणभूमि को कूच करती है। ध्यान से देखने पर नीचे फर्श के पास दीवार पर एक दरार पाई, जिससे होकर चींटियां बाहर जा रही थीं। खाने की छुट्टी की घण्टी बजते ही मैं भाग कर अपनी कक्षा के पीछे गया। वहां एक छेद से चींटियां बाहर आ रही थीं। घास पर से होकर वे अमरूद के पेड़ की तरफ बढ़ रहीं थीं।

चींटियों का पीछा करता हुआ मैं अमरूद के पेड़ की जड़ के पास पहुंचा और वहां एक दुर्ग सरीखा कुछ पाया। वो जो भी चीज़ थी उसे देखकर मेरे मन में यही शब्द आया। वह मिट्टी का एक टीला था जिसके तले में एक छोटा-सा छेद था। यहीं से चींटियां आना-जाना कर रही थीं। मेरे भीतर उस दुर्ग के अंदर झांकने की चाहत पनपी। मेरी जेब में लकड़ी थी, जिसकी नोक से मैं बड़े ध्यान से उस ढेरी को

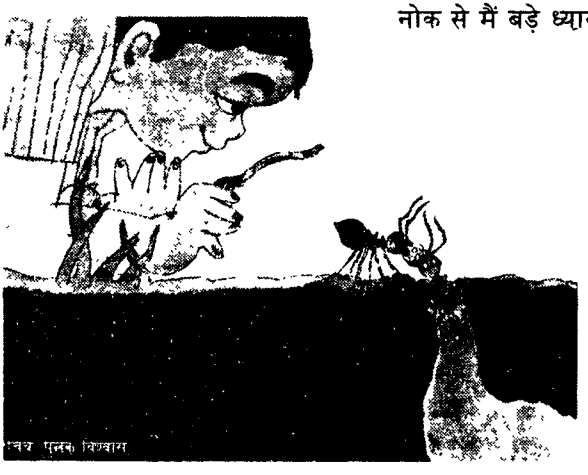

खोदने लगा। पहले-पहले तो मुझे कुछ न दिखा। लेकिन थोड़ा और खोदने पर मैं अवाक रह गया। उस टीले के अंदर अनगिनत छोटे-छोटे कमरे बने थे और एक कमरे से होकर दूसरे कमरे को जाती एक भूल भुलैया। अदभुत! नन्हीं-नन्हीं चींटियों ने अपने नन्हें-नन्हें हाथों-पैरों से भला कैसे यह दुर्ग रचा होगा। इतनी होशियार वे कैसे हो चलीं? क्या उनके भी कोई स्कूल हैं जहां उन्हें सिखाया जाता है? क्या वे भी किताबों से पढ़ती होंगी, चित्र खींचती होंगी, चीज़ें बनाना सीखती होंगी? इसका मतलब कि वे हम इंसानों से अलग नहीं हैं, सिवाय दिखने के। ऐसा कैसे कि वे अपना घर खुद बना लेती हैं जबकि शेर, हाथी, भालू, घोड़े ऐसा नहीं कर पाते? यहां तक कि मेरा पालतू कुत्ता भूलो भी ऐसा नहीं कर सकता। यह सही है कि चिड़ियां घोंसले बनाती हैं लेकिन एक घोंसले में कितनी चिड़ियां रह सकती हैं? क्या चिड़ियां इतना बड़ा महल बना सकती हैं जिसमें वे हज़ारों की तादाद में रह सकें।

चूंकि मैंने उनके घर का एक हिस्सा बिगाड़ दिया था इसलिए मैंने चींटियों में एक हलचल पाई। मुझे बहुत बुरा लगा। मुझे लगा कि मुझे इसकी भरपाई कुछ अच्छा काम करके करनी होगी, नहीं तो वे मुझे अपना दुश्मन मान बैठेंगी, जो मैं नहीं हूं। मैं सचमुच उनका दोस्त था। अगले दिन मैं मिठाई का एक टुकड़ा, जो मां ने मुझे खाने के लिए दिया था, साल के पत्ते में लपेट स्कूल ले आया। स्कूल शुरू होने से पहले ही मैंने चींटियों की बाम्बी के पास मिठाई का टुकड़ा रख दिया। चींटियों को भोजन की तलाश में बहुत दूर जाना पड़ता होगा; आज उन्हें ऐन दहलीज़ पर खाना मिल जाएगा।

कुछ ही हफ्ते में गर्मियों की छुट्टियां शुरू हो गईं और चींटियों से मेरी दोस्ती परवान चढ़ने लगी। मैं बड़ों से चींटियों के व्यवहार बाबत बात करता, लेकिन वे ध्यान ही न दें। तिस पर उनका हंसना मुझे उनसे और दूर ले जाता। मैंने तय कर लिया कि किसी से कुछ न कहूंगा। मैं जो भी करता हूं अकेला ही करूंगा। और जो भी सीखूंगा-जानूंगा खुद तक ही रखूंगा।

एक दोपहर मैं पिंटु के घर के अहाते की दीवार के करीब बैठ लाल चींटियों द्वारा बाम्बी का बनाया जाना देख रहा था। लोगों का कहना है आप लाल चींटियों के पास ज़्यादा देर नहीं बैठ सकते क्योंकि वे काट लेती हैं। मुझे भी लाल चींटियों ने बहुत काटा है लेकिन मैंने पाया कि वे पिछले कुछ समय से ऐसा नहीं कर रही हैं। इसी के चलते मैं बेफिक्री से उन्हें देख रहा था। अचानक मैंने चीकू को लंबे-लंबे डग भरते वहां आते देखा। मैंने अब तक चीकू का ज़िक्र नहीं किया है।

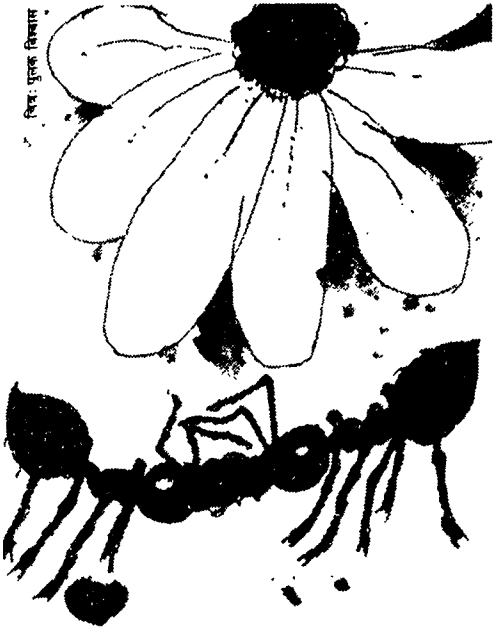

उसका असली नाम श्रीकुमार है। पढ़ता तो वो मेरी ही कक्षा में है लेकिन मुझ से कुछ बड़ा होगा। उसके होठों के ऊपर मूंछों की एक धुंधली-सी लकीर जो दिखती है। चीकू की दादागिरी की वजह से कोई भी उसे पसंद नहीं करता। आमतौर पर मैं उससे पंगा नहीं लेता, मुझसे तगड़ा जो है।

चीकू ने मुझे देखा और गला फाड़कर ज़ोर से चिल्लाया, "अरे ओ पागल गधे, वहां ज़मीन पर उकडू बैठे क्या कर रहे हो?"

मैंने उस पर कोई ध्यान न दिया, वो मेरी तरफ आने लगा। मैंने अपनी आंखें चींटियों पर ही लगाए रखीं। उसने मुझे धकियाते हुए कहा, "बेटा इरादे क्या हैं? मुझे यह एक नज़र भी नहीं भाता।"

मैंने कुछ भी छिपाने की कोशिश न की और जो भी कर रहा था सब बता दिया।

चीकू ने मुंह बनाया और कहा, "तुम्हारा मतलब है कि तुम चींटियां देख रहे हो? इसमें देखने जैसा क्या है? और क्या चींटियां तुम्हारे घर में नहीं हैं कि तुम सब कुछ छोड़-छाड़कर यहां आए हो।"

मुझे बहुत गुस्सा आया। मन ही मन सोचा – तुम्हें क्या मतलब, मैं कुछ भी करूं। तुम कौन होते हो दूसरों के मसले में टांग अड़ाने वाले। "मैं इसलिए देख रहा हूं क्योंकि मुझे इसमें मज़ा आता है। तुम चींटियों के बारे में कुछ नहीं जानते। तुम अपना रास्ता नापो, मुझे आकर परेशान क्योंकि करते हो?" चीकू गुस्सैल बिल्ली की तरह गुर्राया, "तो तुम्हें चींटियां देखना अच्छा लगता है। अब ले मज़ा ... ले ... ले और ले ..... " इससे पहले कि मैं कुछ कर या कह पाता चीकू ने

अपनी एड़ी के तीन ज़ोरदार वारों से चींटियों की बाम्बी को रौंद दिया। कम से कम पांच सौ चींटियां कुचली गई होंगी।

एक क्रूर अट्टाहास के बाद चीकू जैसे ही मुड़ा, अचानक मेरे अंदर एक अजब सी ऐंठन उठी। मैं चीकू की पीठ पर सवार हो गया, उसके बाल कसकर पकड़े और उसके सिर को पिंटू की चारदीवारी पर चार-पांच बार दे मारा। उसके बाद उसे छोड़ दिया।

चीकू बुक्का फाड़कर रोता हुआ चलता बना। घर पहुंचा तो पता चला कि मेरे पहले ही चीकू की शिकायत वहां पहुंच गयी है। मुझे अचरज हुआ जब मुझे देखते ही मां ने न डांटा और न ही पीटा। शायद उन्हें चीकू पर यकीन न आया, मैंने आज तक किसी पर हाथ जो नहीं उठाया था। उलटे मां चीकू को लेकर मेरे डर से वाकिफ थी। लेकिन जब मां ने मुझसे माज़रा जानना चाहा तो मैं झूठ न बोल सका। "यानी तुमने सचमुच उसके सिर को दीवार से भिड़ा दिया।" मां चकित थी। "हां ... मैंने ऐसा किया .... और चीकू ही क्यों, जो कोई भी चींटियों की बाम्बियों को कुचलेगा, मैं उसका यही हाल बनाऊंगा।"

मेरे इस जवाब ने मां का पारा इतना चढ़ा दिया कि उन्होंने मुझे एक थप्पड़ जड़ दिया। वो शनिवार का दिन था। पिताजी उस दिन दफ्तर से जल्दी घर आते हैं। मां से पूरा किस्सा सुनते ही उन्होंने मुझे कमरे में बंद कर दिया। यह अलग बात है कि मेरे गाल थप्पड़ की मार से चिनचिना रहे थे, लेकिन मुझे अपने किए पर कोई अफसोस न था। हां, चींटियों के लिए अफसोस ज़रूर था। एक बार साहिबगंज में जहां मेरा रिश्तेदार परिमल रहता है, दो रेलों की भिंडत हुई जिसमें तीन सौ लोग मारे गए थे। और चीकू को इतनी सारी चींटियों को मारने में सिर्फ कुछ सैकण्ड लगे।

कितना गलत था यह सब, कितना कितना.... गलत।

बिस्तर पर लेट आज के घटनाक्रम पर सोचते-सोचते अचानक कुछ ठण्ड-सी महसूस हुई और मुझे कम्बल ओढ़ लेना पड़ा। और जाने कब मैं नींद के आगोश में दुबक गया। अचानक एक अजीब-सी आवाज़ ने मुझे झंझोड़ दिया। एक महीन, पैनी, बहुत सुरीली, गाने की तरह एक लय में ऊपर-नीचे होती। मेरे दोनों कान खड़े हो गए, चारों तरफ देखा लेकिन सुर का स्रोत न जान सका। हो सकता है बहुत दूर कोई गा रहा हो। लेकिन आज से पहले मैंने ऐसा गाना कभी नहीं सुना था।

अरे, यह क्या है। जब मैं यह अजीब-सी आवाज़ सुन रहा था एक चींटी पाईप से बाहर निकल आई थी।

इस बार मैंने उसे पहचानने में ज़रा भी भूल न की। यह वही चींटी थी जिसके लिए मैं तिनके का सहारा बना था। मेरी तरफ मुंह कर आगे की टांगों को सिर तक उठा वो अब मुझे सलाम कर रही थी। इस श्यामवर्ण जीव को मैं क्या नाम दूं? काली? कृष्ण? मुझे सोचना होगा? दोस्त बेनाम कैसे हो सकता है।

मैंने खिड़की की चौखट पर अपना हाथ रख दिया; हथेली ऊपर की ओर थी। चींटी ने अपने सिर से टांगें हटाकर नीचे कर लीं और धीरे-धीरे मेरे हाथ की तरफ बढ़ने लगी। मेरी छोटी ऊंगली पर चढ़ वो मेरी हथेली की लकीरों पर दौड़ा-दौड़ी करने लगी। दरवाज़े पर अचानक हुई आहट ने मुझे चौंका दिया। चींटी भी झट कूद पाईप में दुबक गायब हो गई।

मां ने मुझे दूध का ग्लास पकड़ाया। हल्के से मेरा माथा छुआ। फिर से बुखार चढ़ आया था। अगली सुबह डॉक्टर आया। मां बोली, "रात भर बेचैन रहा, बार-बार 'काली', 'काली', बड़बड़ाता रहा है।"

मां मेरी नई दोस्ती से अनभिज्ञ थी इसलिए शायद यह समझ रही थी कि मैं काली का नाम जप रहा था। डॉक्टर ने जब मेरी पीठ पर स्टेथोस्कोप रखा, फिर से वह अजीबो-गरीब आवाज़ मेरे कानों में पड़ी। कल से कुछ ज़्यादा ऊंची और भिन्न लय में वह आवाज़ खिड़की की तरफ से आती लग रही थी। चूंकि डॉक्टर ने हिलने को मना किया था मैं उस ओर अपना सिर नहीं घुमा सकता था। डॉक्टर की जांच खत्म होते ही मैंने तुरंत खिड़की की ओर निगाह डाली। नमस्ते .....। इस बार एक बड़ी चींटी थी। वो भी मुझे सलाम कर रही थी। तो क्या, अब सारी चींटियां मेरी दोस्त हैं? क्या यही चींटी गाना गा रही थी?

लेकिन मां ने गाने बाबत कुछ न कहा। तो क्या उन्हें वह सुनाई नहीं पड़ा? मैंने अपनी जिज्ञासा शांत करने के लिए उनकी तरफ सिर घुमाया तो उन्हें उस चींटी को घूरते पाया। उनकी आंखों में खौफ तैर रहा था। अगले ही पल उन्होंने मेज़ से मेरी गणित की किताब उठाई; मुझ पर कुछ झुकीं और किताब की तेज़ मार से उस चींटी को कुचल डाला।

उसी पल सारे सुर शांत हो गए। "पूरे घर में चींटियां रेंग रही हैं। ज़रा सोचो कोई तुम्हारे कान में घुस जाती तो।" इंजेक्शन लगाकर डॉक्टर चला गया। मैंने मरी हुई चींटी को देखा। वो एक सुरीला गाना गाते-गाते मारी गई थी। मेरे एक चाचा इंद्रनाथ की तरह। वे शास्त्रीय गीत गाते थे जो मुझे कम ही समझ आते थे। एक दिन वे तानपुरा बजाते हुए गा रहे थे कि अचानक

चल बसे। जब उन्हें श्मशान घाट ले जाया गया, तो कीर्तन गाने वालों का हुजूम जुलूस के रूप में भगवान हरी की स्तुति में भजन गा रहा था। मैंने भी वह सब देखा; हालांकि उस वक्त मैं बहुत छोटा था। लेकिन मुझे आज भी सब कुछ याद है। आज एक अजीब वाक्या हुआ। इंजेक्शन नींद को मेरे पास ले आया और नींद एक सपने को। जहां मेरे चाचा इंद्रनाथ की अंत्येष्टि की तरह, कोई एक दर्ज़न चींटियां मृत चींटी को अपने कंधों पर उठाए जा रही थीं। उनके पीछे चींटियों की एक जमात कोरस गाते-गाते चल रही थी।

माथे पर मां के हाथ की छुअन ने मुझे जगा दिया। बाहर दोपहर थी। मैंने खिड़की की ओर देखा। मृत चींटी वहां नहीं थी।

इस बार बुखार कई दिनों तक बना रहा। कोई अचरज नहीं, क्योंकि घर का हर बाशिंदा चींटियों को मारने पर तुला था। कैसे जा सकता था बुखार, जब सारा दिन चींटियों का आर्तनाद कानों को भेदे जाता हो?

फिर एक और समस्या भी थी। जब रसोई में चींटियों की मारकाट मची होती, चींटियों के झुण्ड के झुण्ड मेरी खिड़की की चौखट पर आकर विलाप करते। मैं समझ गया कि मुझ से कुछ करने की गुहार की जा रही है। या तो मारकाट बंद हो या फिर इस कत्लेआम में लिप्त अपराधियों को सज़ा हो। लेकिन चूंकि बुखार में लिपटा था इसलिए मैं कुछ न कर सका। और अगर मैं स्वस्थ होता भी तो भी कैसे मुझ जैसा छोटा बालक बड़ों को कुछ करने से रोक सकता था? लेकिन एक दिन मैं कुछ-न-कुछ तो करने को बाध्य हो ही गया। मुझे पूरा-पूरा तो याद नहीं कि वो कौन-सा दिन था। लेकिन इतना ज़रूर याद है कि वह अल्ल-सुबह का वक्त था। उठते ही मां के शब्द सुनाई दिए – एक चींटी फटीक के कान में घुस गई और उसे काट लिया।

खबर मुझे गुदगुदा गई लेकिन तभी मैंने झाड़ुओं को ज़ोर-ज़ोर से ज़मीन पर पटकने की आवाज़ सुनी। मैं समझ गया कि यह कहर चींटियों पर बरस रहा है।

तभी एक अजीब सी बात हुई। "बचाओ .... बचाओ" की तीखी आवाज़ें सुनाई पड़ने लगीं। मैंने खिड़की की ओर देखा। चींटियों का एक बड़ा हुजूम चौखट पर मौजूद था और उत्तेजित हो इधर-उधर घूम रहा था। उनकी पुकार सुन मैं और अधिक शांत न रह सका। अपने बुखार की बात भूलकर मैं बिस्तर से कूदा और कमरे से बाहर भागा। पहले पहल तो मुझे कुछ न सूझा। फिर मैंने ज़मीन पर पड़ा मिट्टी का घड़ा उठाया और उसे

ज़ोर से नीचे पटका। फिर मैं वे तमाम चीज़ें तोड़ने लगा जिन्हें तोड़ा जा सकता था। चाल कारगर हो गई। चींटियों का मारा जाना तुरंत बंद हो गया। मेरी मां, मेरे पिताजी, मेरी चाची, मेरा चचेरा भाई शबी सभी अपने-अपने कमरों से बाहर निकले और मुझे जकड़ लिया। मुझे फिर से बिस्तर पर डाला। कमरे के दरवाज़े बंद कर दिए गए।

मैं दिल खोलकर हंसा। मेरी खिड़की पर बैठी चींटियां शुक्रिया मनाती रहीं। और फिर वे पाईप में चली गईं। इसके तुरंत बाद मुझे घर छोड़ना पड़ा। एक दिन डॉक्टर ने मेरी जांच की और कहा कि मुझे इलाज हेतु अस्पताल में भर्ती करना होगा।

यह अस्पताल का एक कमरा है। पिछले चार दिनों से मैं यहां पर हूं।

पहले दिन झक साफ कमरे को देख मैं उदास हो आया था। जानता था कि इस म्यान में केवल एक चीज़ रह सकती है – सफाई या फिर चींटियां। नया होने की वजह से कमरे में कोई दरार, कोई सुराख भी न था। एक आला तक न था वहां कि चींटियां उसके पीछे या नीचे बसेरा कर सकें। हां, खिड़की के बाहर आम का एक पेड़ ज़रूर चहक रहा था, जिसकी एक डगाल मेरी पकड़ के भीतर थी।

विचार कौंधा, अगर कहीं चींटियां मिल सकती हैं तो बस इसी डाल पर।

लेकिन पहले दिन तो मैं खिड़की के पास न जा सका। जाता भी भला कैसे, मैं अकेला होता ही कब था। नर्स, डॉक्टर या हमारे घर का कोई बंदा, वहां हमेशा जमा रहता।

दूसरा दिन भी उतना ही खराब रहा।

खीज ऐसी हुई कि मैंने दवा की शीशी ज़मीन पर दे मारी। बस फिर क्या था। इधर कांच के टुकड़े मिली दवा का फैलना, उधर डॉक्टर का पारा चढ़ना। उसकी कड़ी-सूखी मूंछें और उसका ये मोटा चश्मा, दोनों ये बता रहे थे कि यह नया वाला डॉक्टर वैसे भी कोई अच्छा आदमी न था।

तीसरा दिन, और कुछ घट गया। मेरे कमरे में सिर्फ एक नर्स थी जो किसी किताब में मशगूल थी। बिस्तर पर पड़ा-पड़ा मैं किसी जुगत के बारे में सोच ही रहा था कि धम्म की आवाज़ आई। किताब नर्स के हाथों से फिसल कर ज़मीन पर औंधी जा गिरी थी। और नर्स थी ऊंघ के चंगुल में। चुपके से बिस्तर से उतर मैं पंजों के बल चलता खिड़की तक जा पहुंचा।

अपने शरीर को कोशिश से खींच मैं खिड़की के बाहर झुका। आम की डगाल को हाथ में ले मैंने उसे अपनी ओर खींचा।

इस सब में हल्का-सा एक खटका हुआ, जो नर्स को जगाने के हिसाब से

चित्र पुलक विश्वास

काफी था। बस फिर क्या था। चीखना चिल्लाना, भगदौड़ शुरू हो गई।

नर्स ज़ोर से चीख बिजली की सी तेज़ी से लपकी और मुझे अपनी बाहों में लपेट खींचने लगी.... वापस बिस्तर की ओर। इस बीच दूसरे लोग भी कमरे में आ चुके थे।

करने के लिए अब मेरे पास कुछ शेष न था।

बिना देर लगाए डॉक्टर ने एक इंजेक्शन घोंप दिया।

उनकी बातों से लगा कि वे सोच रहे थे कि मैं कूदने के मूड में था। पगले! इत्ती ऊपर से कूदता तो क्या मेरी हड्डी पसली एक न हो जाती और मैं क्या बचता!

डॉक्टर के जाने के बाद मुझे नींद आने लगी। मेरे घर के बिस्तर के पास वाली खिड़की याद आई और मुझे उदास कर गई। खुदा जाने कब घर-वापसी होगी।

मैं नींद की मुंडेर पर था कि अचानक एक महीन-सी आवाज़ आई, *आपकी सेवा में हाज़िर हैं ये सिपाही।*

मैंने आंखें खोलीं। मेरे बिस्तर के करीब मेज़ पर रखी दवा की बोतल पर दो बड़ी-बड़ी लाल चींटियां अपना सीना ताने खड़ी थीं। आम की डाल से जाने कब मेरे हाथ पर आ गई होंगी।

सिपाही! मैंने आश्चर्य ज़ाहिर किया।

जी सरकार, आपकी सेवा में जनाब।

तुम्हारे नाम क्या हैं? एक ने कहा लाल बहादुर सिंह और दूसरे का नाम था लाल चन्द पाण्डे।

मुझे खुशी हुई। मैंने उन्हें आगाह किया कि लोगों के कमरे में आने पर वे छिप जाएं वरना वे मारे जा सकते हैं। लाल चन्द और लाल बहादुर ने मुझे सलाम ठोंका और कहा *जी सरकार।* फिर दोनों ने एक-दो गाना सुनाया और मैं सुखी सपनों में खो गया।

मुझे आपको कल की एक घटना के बारे में अभी इसी पल बताना होगा। क्योंकि पांच बजने वाले हैं, डा'क साब आते ही होंगे।

मैं बिस्तर पर लेटा, मेज़ पर लाल चन्द और लाल बहादुर के बीच हो रही कुश्ती को देख रहा था। कायदे से मुझे नींद आनी चाहिए थी लेकिन गोलियां और इंजेक्शन बेअसर साबित हुए थे। या सही कहूं तो मैंने अपनी इच्छा-शक्ति से खुद को जगाए रखा था। अगर मैं दोपहर को सो जाता तो अपने इन नए दोस्तों से कब खेलता।

दोनों चींटियों ने बढ़िया खेल का प्रदर्शन किया। बताना मुश्किल था कि कौन जीतेगा। कि अचानक भारी जूतों की आवाज़ हुई। डॉक्टर आ रहा था।

मैंने इशारा किया और लाल बहादुर जल्दी से मेज़ के नीचे गायब हो गया।

लेकिन लाल चन्द अपनी पीठ के बल गिर गया और हाथ-पांव पटकने लगा। इसलिए वह भाग न सका। और उस दुर्घटना की यही वजह थी।

डॉक्टर आया। चींटी देखी। अंग्रेज़ी में कुछ बुदबुदाया और हाथ से उसे मेज़ के नीचे धकेल दिया। उसकी चीखें उसकी दर्द की कहानी कह रही थीं। लेकिन मैं क्या करता। तब तक डॉक्टर ने मेरी नाड़ी जांचने के लिए मेरा हाथ पकड़ लिया था। मैंने फिर भी उठने की कोशिश की, लेकिन नर्स ने मुझे पकड़ कर लिटा दिया। जांच के बाद हमेशा की तरह डॉक्टर ने उदास-सा चेहरा बनाया और अपनी मूंछों के कोने खुजाने लगा। वह दरवाज़े की ओर मुड़ने ही वाला था कि अचानक उसने अपना चेहरा घुमाया, उछला

और अंग्रेज़ी में तीन बार ज़ोर से चिल्लाया 'आउच्च!'।

फिर क्या था सारे बंधन ढीले पड़ गए। उसका स्टेथोस्कोप उसके हाथ से दूर जा छिटका, उसका चश्मा नाक से कूदा, नीचे गिरा और चूर-चूर हो गया। जैकेट को निकाल फैंकने की जद्दोज़हद में उसका एक बटन जैकेट से आज़ाद हो चला। उसकी टाई गले पर और कस कर लिपट गई।

उसका हांफना और सिसकारी भरना तब तक जारी रहा जब तक कि उसे टाई से मुक्ति न मिली। जैसे ही उसने इधर-उधर कूदते चिल्लाते हुए अपनी शर्ट उतारी, उसकी बनियान का छेद सामने हो आया। मैं भौंचक्का था!

"क्या हुआ सर!" नर्स चकराई।

डॉक्टर का बंदर नाच और चिल्लाना जारी था, "एक लाल चींटी मेरे बाजू से चढ़ कर अंदर घुस गई। आउच्च।"

बढ़िया... बहुत बढ़िया ... मुझे मालूम था, ऐसा ही होगा। यही उसका सही इलाज है।

लाल बहादुर ने अपने दोस्त का बदला ले लिया था।

अगर वे मुझे इस वक्त देखते तो जानते कि *सदानन्द खुश हुआ!*

सत्यजीत रे: प्रसिद्ध फिल्म निर्देशक। बच्चों के लिए फिल्म बनाने के अलावा फंतासी एवं रोमांचकारी साहित्य का सृजन किया है।

अनुवाद: मनोहर नोतानी: अनुवाद कार्य में रुचि, भोपाल में रहते हैं।

चित्र: विप्लव शशि: कला के विद्यार्थी हैं, फिलहाल बड़ोदा विश्वविद्यालय में पढ़ाई कर रहे हैं। इस कहानी में कुछ चित्र 'छोटी चींटी बड़ा काम' पुस्तक (प्रकाशक: नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया) से लिए हैं जिन्हें **पुलक विश्वास** ने बनाया है।